तीसरा अध्याय

समस्या : अर्थ, परिभाषा, मीमांसा

समस्या : अर्थ, परिभाषा, मीमांसा

आज के युग को 'विज्ञान युग', 'राकेट युग' विज्ञापन युग आदि कहा जाता है। पर मुझे लगता है कि आज के युग को 'समस्या युग' कहाना अधिक संगत होगा। इस विस्तृत विशाल मानव समूह को 'समस्या' जैसे छोटे से शब्द ने आज बाँध रखा है, त्रस्त किया है। समस्या की पूर्ति के लिए आज मानव तथा मानव समाज लगातर प्रयत्न में लगा रहता है। कभी-कभी समस्या पूर्ति के लिए समस्या को सुलझाने के लिए मनुष्य को अपनी आहुति तक भी देनी पड़ती है। वैसे समस्या का अस्तित्त्व बहुत पुरातन है। आदिम युग में मनुष्य के साथ ही समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

3.1 समस्या शब्द का अर्थ -

"संज्ञा स्त्री (सं.) 1. कठिन अवसर या प्रसंग। कठिनाई। 2. किसी श्लोक या छंद आदि का वह अंतिम पद जो पूरा श्लोक या छंद बनाने के लिए तैयार करके दूसरों को दिया जाता है। 3. मिलाने की क्रिया। 4. संघटन।"[1]

"सं. समस्या - 1. उलझन। कठिन प्रश्न। 2. पहेली दुर्बोध बात, उलझन। 3. निर्मेय।"[2]

"स्त्री (सं. समस्य - टाप)। मिलने की क्रिया या भाव मिलन, 2. मिश्रण, संघटन। 3. उलझनवाली ऐसी विचारणीय बात जिसका निराकरण सहज में न हो सकता हो। कठिन या विकट प्रसंग प्रॉब्लेम। 4. छंद, श्लोक आदि का ऐसा अंतिम चरण या पद जो काव्य रचना के कौशल्य की परीक्षा करने के लिए इस उद्देश्य से कवियों के सामने रखा जाता है कि वे उसके आधार पर अथवा उसके अनुरूप पूरा छंद या श्लोक प्रस्तुत करें।"[3]

रामचंद्र शुक्ल रामचंद्र शर्मा और सत्यप्रकाश डी. एस्. सी. आदि कोश द्वारा दिए गए अर्थों का विचार करने पर समस्या का 'कठिन विकट प्रसंग अर्थ प्रसंगोचित जान पड़ता है, क्योंकि इसमें विषम परिस्थितियाँ होने की ध्वनि है। इसी के साथ चुनौती का भाव विद्यमान है, जो व्यक्ति को कुछ करने के लिए प्रेरित करता है।

3.2 समस्या की परिभाषा -

आकाश के असीम विस्तार में टिमटिमाते तारों की तरह समस्याएँ भी अनगिनत और असंख्य हैं, उनकी यात्रा का कोई अंत नहीं है।

- इलाचंद्र जोशी

धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, न्याय-अन्याय इनको मिटाया जाय तो जीवन का अर्थ ही समाप्त हो जाएगा। द्वैत वेदनाओं में से ही शक्ति का उदय होता है। जिसमें पराक्रम और पुरुषार्थ फलित होता है। समस्या तक ही जीवन है। समस्या की वजह यत्न प्रयत्न है। द्वैत रहित स्थिति यति है तो द्वैत सहित स्थिति समस्या गति है, जीवन है।

- जैनेंद्रकुमार

प्रेरक परिस्थितियों के अभाव में साहित्य पंगु हो जाता है। एक प्रकार से साहित्य रूपी जीवन का शरीर तत्त्व समाज है तो इस शरीर में स्पंदन करनेवाला प्राणतत्व तत्कालिन परिस्थितियाँ हैं।

'समस्या' खड़ी होने पर विषम परिस्थिति के एहसास से चुनौती मानकर मनुष्य उसे सुलझाने के लिए कुछ करने के लिए प्रेरित हो जाते हैं। 'समस्या' के अर्थ में 'प्रॉब्लेम' शब्द का प्रयोग किया जाता है पर समस्या शब्द प्रॉब्लेम शब्द से अधिक व्यापक है। क्योंकि इसका संबंध पूरे प्रसंग से होता है। जिसमें अनेक प्रश्न सामिल रहते हैं।

3.3 समस्या का स्वरूप व्याप्ति -

पहले समस्या शब्द साहित्यिक क्षेत्र से संबंधित था। कवियों के लिए वह चुनौती थी। 'विषम परिस्थितियों से अदभूत स्थिति' के अर्थ में कालांतर में 'समस्या' शब्द रूढ़ हो गया।

'समस्या' शब्द राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षिक सभी क्षेत्रों में अवगत होने लगा है। 'समस्या' एक क्रिया मात्र नहीं वह एक प्रक्रिया होती है। इसमें तीन सोपान होते हैं। इसकी तीन अवस्थाएँ होती हैं। यह एक विचारों की प्रक्रिया होती है, जिसमें संघर्ष की संभावना होती है। जो मनुष्य को कुछ करने को प्रेरित करती है, जिसमें मनुष्य का जीवन गतिशील रहता है। 'समस्या' एक प्रक्रिया है, जिसमें द्वंद्वात्मक स्थिति है। हेगेल के द्वंद्वात्मक सिद्धांतों के

अनुसार एक विचार आता है, उसी विचार के अनुसार अवस्थाएँ पैदा होती हैं। फिर दूसरा विचार आता है, पर पहले विचार से टक्कर लेता है। फिर इन दोनों विचारों के टक्कर से तीसरा विचार उत्पन्न होता है। इस द्वंद्वात्मक प्रक्रिया में जिस क्रम से हम तत्वबोध पर पहुँचते हैं वे तीन सोपान हैं - वाद, प्रतिकवाद, समवाद। इस अवतरण से यह स्पष्ट होता है कि समस्या एक क्रिया नहीं बल्कि प्रक्रिया है। इसमें तीन सोपान होते हैं। इसमें तीसरे तत्त्व की उत्पत्ति की समस्या है। याने परस्पर विरोधी परिस्थितियों में समस्या का उद्‌भव होता है।

'समस्या' सीधी सरल प्रक्रिया नहीं है। वह वक्र उलझनों से एवं ग्रंथियों से युक्त होती है। इसमें व्यंग्य भी व्याप्त है, अभिप्रेत है। 'समस्या' मनुष्य जाति के सम्मुख चुनौती के रूप में खड़ी होती है। वह चिंतनशील प्राणी को अनुप्रणित एवं उत्प्रेरित करती है। मानवीय अंध: विश्वासों एवं रूढ़ि परंपराओं को वह तीक्ष्ण प्रहार करती है। वह मनुष्य के मस्तिष्क को झकझोरती है, उसे बेचैन करती है। इस तरह वह मनुष्य को सतत चिंतनशील बनाती है।

मनुष्य का जीवन प्रारंभ से अंत तक तथा सभी क्षेत्रों में समस्या का एहसास होता है। समस्या पूरे विश्व को ही व्याप्त हो चुकी है। और मनुष्य मक्खी की तरह समस्या रूपी जाल में उलझ गया है। उसे सुलझाने की कोशिश कर रहा है और करना ही होगा।

3.4 समस्या और साहित्य -

वर्तमान युग कलियुग है या नहीं इस बारे में मतभेद हो सकता है किंतु इसमें दो मत संभव नहीं हैं कि वर्तमान युग समस्याओं का युग है। वर्तमान युग की समस्याएँ तो कुछ दूसरी ही रंग में रंगी हुई हैं। कारण यह है कि आज का व्यक्ति यदि एक ओर पूराने संस्कारों और मान्यताओं से बँधा रहना चाहता है, तो दूसरी ओर उन्हें छोड़कर नए संस्कार ग्रहण करने का संघर्ष भी वह निरंतर कर रहा है। इस संघर्ष में वह कहीं-कहीं पथभ्रष्ट हो गया है। वस्तुत: वर्तमान युग समस्याओं का युग है। साहित्य समाज का प्रतिफलन है वह मानव निर्मित होता है। मानव जिस समाज में रहता है वहाँ विभिन्न समस्याएँ दिखाई देती हैं। मनुष्य जीवन का कोई भी कोना ऐसा नहीं जहाँ आज समस्याओं का अस्तित्त्व न हो। मनुष्य जीवन की समस्याएँ उसकी चित्तवृत्तियों के विकास के साथ-साथ निरंतर बढ़ती चली जा रही है। मनुष्य की इच्छाएँ सदैव अतृप्त रहती हैं यही

अतृप्ति मनुष्य की कालंतर में, जीवन में समस्याओं का जाल-सा फैला देती है। वर्तमान युग में तो समस्याएँ जीवन के लिए इतनी बढ़ गई हैं कि उनके कारण जीवन स्वयं एक समस्याओं की शृंखला हो गया है। ''हितेनसह की भावना से युक्त साहित्य को भी समस्याओं में जकड़ लिया है।''[4]

समस्या साहित्य ने जहाँ चिरकाल से चली आज रही मानव की आस्थाओं और प्राचीन रूढ़ियों को खंडित किया है, वहाँ उसे मानवता का पाठ भी पढ़ाया है। समस्या साहित्य कुंठा, अवसाद और निराशा के जीवन में नई चेतना, नया आत्मबल तथा नया सहारा भर देता है। जिन समस्याओं में मनुष्य पिसा जा रहा था और समाधान को कोई रूप ही दिखाई नहीं देता था, उन सब पर समस्या साहित्यकारों ने अपनी कलम चलाई है। वर्तमान युग में साहित्य को युगानुरूप होना अनिवार्य है। तथा साहित्य में समस्याओं का चित्रण होना ही मानवमात्र की आवश्यकता है। डॉ. विमल भास्कर के मतानुसार - ''समस्याओं का स्वरूप आज मकड़ी के जाल सदृश्य लग गया है जो देखने में तो अलग-अलग तन्तुमय ही दिखाई देते हैं परंतु एक दूसरे से इस तरह निगुंथित है कि उन्हें अलग किया नहीं जा सकता।''[5]

वर्तमान युग में समस्या कठिन पहेली के सिवा और कुछ नहीं। हिंदी साहित्य में समस्याओं के चित्रण का प्रयास भारतेंदु युग में ही हो गया था।

जब तक मनुष्य है तब तक समस्या रहेगी, समस्या है तब तक साहित्य लिखा जाएगा। अत: समस्या और साहित्य इन दोनों का चोली दामन-सा अटूट रिश्ता-नाता रहेगा।

3.5 समस्या साहित्य की अनिवार्यता -

मनष्य जीवन में समस्याओं एवं विड़ंबनाओं के विकास ने आज समस्या साहित्य की रचना को अपरिहार्य बना दिया है। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं आर्थिक कोई भी परिस्थिति इससे अछूती नहीं रही। आज स्वतंत्रता को उपलब्ध हुए 53 वर्ष पूरे हो चुके हैं किंतु समस्याओं से पीछा अभी तक नहीं छुटा और लगता है कि न ही छुट पाएगा।

साहित्य में समसामायिक तथा देशकाल एवं साहित्यिक परंपराओं के अनुकूल समस्याओं का चित्रण होना ही चाहिए, यह केवल युग की अनिवार्यता नहीं अपितु मानव जीवन की आवश्यकता है। वर्तमान युग में समस्या साहित्य की आवश्यकता का महत्त्व बढ़ रहा है। मानव

अपने अधिकारों का अधिक-से-अधिक प्रयोग करना चाहता है जिससे मानव जीवन में स्वत: समस्या साहित्य की आवश्यकता का महत्त्व बढ़ रहा है। मानव अपने अधिकारों का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहता है जिससे मानव जीवन में स्वत: समस्याएँ प्रवेश करती जा रही हैं। उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी तथा कविता आदि साहित्य की कुछ ऐसी विधाएँ हैं जिनके द्वारा समस्याओं से समाज को अवगत किया जा सकता है। शिक्षित वर्ग साहित्य को पढ़कर समस्याओं से अवगत हो सकता है। इसके कारण व्यक्तिगत जीवन के साथ-साथ राष्ट्र और समाज का उसे परिचय होता है। अशिक्षित वर्ग के लिए नाटकों को मंचिय कर समाज को इससे परिचित कराया जा सकता है। समाजकल्याण की गाड़िया गाँवों में जाकर इनके संबंधित एकांकियों को चित्रित कर रही हैं जिससे उन्हें इस समस्या के समाधान के लिए बहुत अधिक सहायता मिल रही है।

आज के युग में समस्या-साहित्य का निर्माण होना अंतत: अनिवार्य हो गया है जो कि जीवन और राष्ट्र से संबंधित आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सभी समस्याओं को सुलझे हुए रूप में प्रस्तुत करें। साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समस्याओं को परिचित कराने पर ही राष्ट्र एवं समाज का उत्थान होता है। जीवन की सभी स्थितियों का चित्रण करने के लिए साहित्यकार प्रतिबद्ध रहता है। आज का साहित्यकार इस दिशा में पूर्णत: है।

3.6 समस्या के प्रकार -

समस्या के प्रमुख दो प्रकार हैं -

3.6.1 आध्यात्मिक समस्या -

आध्यात्मिक या आंतरिक समस्याएँ हमारे चिंतन मनन और संस्कृति से संबंधित होती है। ये समस्याएँ मानवी मूल्यों नैतिकता और धर्म संबंधी तत्त्वों के संकट के कारण उत्पन्न होती है।

3.6.2 भौतिक समस्या -

भौतिक याने बाहरी समस्याएँ जीवन के कठोर सत्य पर आधारित होती है। ये सभी समस्याएँ सामाजिक, विषमताओं अन्यायों एवं शोषणों से उत्पन्न होती है। इनकी पृष्ठभूमि में एक

13838 A

स्वस्थ एवं सुंदर समाज के निर्माण की तड़प होती है।

भौतिक समस्याओं को निम्नलिखित प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है।

1. पारिवारिक समस्या
2. नारी समस्या
3. सामाजिक समस्या
4. आर्थिक समस्या
5. राजनीतिक समस्या
6. धार्मिक समस्या
7. लोसंख्या समस्या
8. सांस्कृतिक समस्या

3.6.2.1 पारिवाररिक समस्या -

समाज में परिवार का अनन्य साधारण महत्त्व है। समाज का निर्माण परिवारों से होता है। इसलिए दूसरे किसी समूह की अपेक्षा परिवार का प्रभाव सामाजिक जीवन पर किसी-न-किसी तरह पड़ता ही रहता है और वह दूरगामी होता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे प्रकृति ने एकाकी नहीं बनाया है। अपने जन्म, पालन-पोषण, सुरक्षा, शिक्षा और अन्य सभी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसे दूसरों की सहायता और सहयोग पर निर्भर रहना पड़ता है। मनुष्य की कुछ आवश्यक शर्ते, जैसे साँस लेना, खाना, पीना, घूमना आदि जिनके कारण वह संसार में जीवित रहता है। इसके अतिरिक्त काम भावना जैसी शर्ते मानव अकेला नहीं कर सकता। इस शर्त को पूरी करने के लिए पुरुष को स्त्री और स्त्री को पुरुष की जरूरत होती है। कामभावना का परिणाम संतानोत्पत्ति हो जाता है। इस प्रकार काम वासना की संतुष्टि के लिए स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के साथ मिलकर रहने लगे। इसलिए एक-दूसरे और बच्चों के जीवन धारणा की चिंता से परिवार का जन्म हुआ। प्रत्येक मनुष्य किसी-न-किसी परिवार का सदस्य होता है। जन्म लेने के बाद उस पर सबसे पहले प्रभाव परिवार के परिवेश का होता है।

मनुष्य के चरित्र गठन का कार्य बचपन से परिवार में होता है। मनुष्य के जीवन की बुनियाद परिवार में ही रची जाती है। माता-पिता तथा उसकी संतान इकठ्ठा रहने के कारण परिवार में कम-से-कम दो पीढ़ियों के लोग रहते हैं। जिससे एक-दूसरे के प्रति प्रेमासक्ति और विवाहबाह्य संबंध, प्रेम, स्वार्थ और स्वतंत्रता आदि का समावेश आता है। नारी को उपभोग्य वस्तु समझनेवाले पुरुषों के लिए पत्नी के मानसिक कष्टों का विचार महत्त्वपूर्ण नहीं था। आधुनिक युग में जब नारी अधिक जागृत, प्रभावशाली और व्यक्तित्ववान बन चुकी है। पुरुष से वह उसी निष्ठा और सदाचरण की उपेक्षा करती है।

नारी और पुरुष के मानसिक प्रक्षोभ या खीझ के अतिरिक्त पर स्त्री की ओर आकर्षित पुरुष सामाजिक दृष्टि से भी अप्रतिष्ठा का भाजन बन जाता है। पुरुष की आत्मग्लानि, अपमानित पत्नी का प्रक्षोभ, पर स्त्री का आकर्षण, सामाजिक प्रतिष्ठा पर आघात इत्यादी अनेक तनावों को निर्माण करनेवाली यह समस्या है।

प्राचीन काल से समाज में संयुक्त परिवार ही अस्तित्व में थी। उन्नीसवीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति, पश्चिमी साहित्य और सभ्यता से संपर्क तथा शिक्षा के प्रचार के फलस्वरूप आर्थिक, समाजिक तथा वैचारिक क्रांति हुई, जिससे परिवार के स्वरूप में आमूलाग्र बदल हुआ है। औद्योगिक क्रांति के कारण - ''मनुष्य की अहंभावना, वैयक्तिक महत्त्वाकांक्षा, ममत्व बुद्धि तथा व्यक्तिगत संपत्ति का मोह उसे अलग परिवार बनाकर रहने के लिए प्रेरित करता है। संयुक्त-परिवार में वह पिता का वंशवर्ती सेवक है, किंतु पथक परिवार में अपने घर का राजा संयुक्त परिवार का दासता से पृथक परिवार की स्वाधीनता स्वाभाविक रूप से अधिक आकर्षक होती है।''[6]

स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण के कारण विवाह से पूर्व एक-दूसरे को चाहना ही प्रेम कहा जाता है। धर्म, जाति-पाँति तथा धन का अभिमान आदि के संबंध में रूढ़िवादिता बहुत बड़े पैमाने पर आज भी दिखाई देती हैं। ऐसी अवस्था में धर्म, जाति-पाँति तथा वर्ग भिन्नता का विचार न करनेवाला प्रेम युवक-युवतियों के जीवन में समस्या पैदा करता है। हर आदमी किसी-न-किसी पर प्रेम जरूर करता है। प्रेम के सिवा उसका जीवन अधूरा रहता है। स्वार्थ के कारण मनुष्य मनुष्य का दुश्मन बन जाता है। स्वार्थ के कारण हर एक व्यक्ति अंधा होता जा रहा है। स्वार्थ के कारण वह किसी की जान तक लेने को तैयार हो जाता है।

हमारे पारिवारिक जीवन पर पश्चिमी सभ्यता का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। विचार-स्वातंत्र्य, अत्याचार-स्वातंत्र्य, समानाधिकार की धारणा, इन सबके फलस्वरूप घर का घरपन नष्ट हो रहा है। आज होटल का रूप प्राप्त हो रहा है। पारिवारिक जीवन में विशेषत: पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण हो रहा है। "उन्नीसवीं शताब्दी की व्यावससायिक क्रांति के कारण तथा पढ़े-लिखे लोगों में व्यक्तिनिष्ठ दृष्टिकोण विकसित होने के कारण, संयुक्त परिवार धीरे-धीरे छोटे-छोटे परिवारों में विभक्त होते गए। ....मुखिया की तानाशाही आधुनिक काल के युवक-युवतियों को मान्य नहीं हो सकती।"[7]

3.6.2.2 ***नारी समस्या -***

प्रारंभिक काल में नर और नारी समानधिकारी थे। नारी स्वतंत्र थी। परंतु सभ्यता के विकास के साथ-साथ पुरुषों में स्वार्थपरखता की भावना नारियों की तुलना में अधिक आयी। नारियों को पुरुषों के अनुकूल आचरण करने के लिए विविश किया गया। "कालांतर में नारियाँ स्वतंत्र भी हुई। रामायण युग इसी का प्रतीक है किंतु पुन: वे सामाजिक नियमों में बाँध दी गई। इस प्रकार नारियों का समाज में उत्थान-पतन होता रहा। संप्रति नारियों की सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं, नारियों में शिक्षा का विकास हुआ है, बहुत अंशों में नारियों की आर्थिक स्थिति सुधरी है तब भी प्राय: नारियाँ सामाजिक बंधनों में बंधी हैं और वे उनकी अनेक सामाजिक समस्याएँ हैं।"[8]

आधुनिक नारी बहुत सीमा तक स्वतंत्र हुई है किंतु आज भी नारी अनेक समस्याओं से पीड़ित है। बाल विवाह, अनमेल विवाह, बहुविवाह, विधवा विवाह और पुनर्विवाह की समस्याएँ नारी जीवन में बनी हुई हैं। नारी पर्दा प्रथा के कारण घर में बंदिनी बना दी गई। दहेज की समस्या ने पुत्री के जन्म को ही अप्रिय बना दिया। बाल विवाह और अनमेल विवाह के कारण विधवा और वेश्या समस्याओं का जन्म हुआ। "नारी जीवन की अनेक समस्याओं जैसे विधवा, वेश्या, अनमेल विवाह, स्वच्छंद प्रेम आदि समाधानों की ओर लेखक अग्रसर हुए, यद्‌यपि वे पूर्ण समाधान देने में असमर्थ रहे।"[9]

भारतीय नारी का आदर्श प्रतिव्रत्य उसका धर्म है। इसकी पवित्रता के कठोर नियम समाज में बनाए गए हैं। परंतु आज पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण के कारण नियमों में

शिथिलता आ रही है। पति के प्रति नारी एकनिष्ठ नहीं रहती है। पति रहते हुए भी वह दूसरे को चाहती है। अवसर मिलने पर पति को छोड़ देती है।

स्त्री का सुंदर होना भी आज एक समस्या बन गई है। नौकरी पेशा नारी और उच्च शिक्षित नारियों की समस्या आधुनिक युग में अधिक मात्रा में दिखाई देती है। सुंदरता की समस्या नारी की सुंदरता असल में प्रकृति का वरदान है किंतु वह भी कभी-कभी अभिशप बनता है। ''सेवा और त्याग की मूर्ति नारी को भारतीय पुरुष प्रधान समाज द्वारा शोषित, पीड़ित, अशिक्षित और हीन वृत्ति का शिकार होना पड़ा।''[10]

आधुनिक युग में पुरुष प्रगतिशील विचारों का समर्थक होते हुए भी संकीर्णता से ग्रस्त है। वह नारी की स्वतंत्रता स्वीकार तो करता है किंतु नारी के प्रति अविश्वास उसमें आज भी विद्यमान है। डॉ. महेंद्र भटनागर की दृष्टि में - ''यों तो वर्तमान हिंदू समाज में सनग्र नारी जीवन पुरुष वर्ग की तिरस्कार, दमन तथा उपेक्षा भावना का शिकार है, लेकिन सबसे अधिक अत्याचार और शोषण की प्रतिमूर्ति एक मात्र विधवा ही है।''[11]

घर और बाहर की समस्या से नारी की व्यक्तित्व में बिखराव आ रहा है। वह न तो पूर्ण रूप से पत्नी रह गई है और न ही बाह्य क्षेत्र की कुशल कार्यकर्ता। ''भारतीय समाज में समस्या सदैव नारी के साथ रही है, क्योंकि पारंपारिक जीवन मूल्यों के निर्वाह को सदैव नारी के साथ जोड़ा गया है।''[12] इस प्रकार विविध समस्याओं और कुप्रथाओं ने नारी जाति को बड़ी हीनावस्था पहुँचा दिया है।

3.6.2.3 सामाजिक समस्या -

सामाजिकता में नैतिक मूल्य, नैतिकता, संस्कृति आदि के अनुसार मानव जीने की प्रणाली इसका प्रयोग जब समाज में अपने आचरण के लिए नहीं होता और किसी दूसरे विचारों को अपने आचरण में लाया जाता है, तब सामाजिक दृष्टि से बाधा का कारण बन जाता है। इसी तरह नैतिक, सामाजिक मूल्यों के संघर्ष में से ही सामाजिक समस्याओं का निर्माण हुआ है यह बात स्पष्ट है। सामाजिक समस्या का विचार करते समय व्यक्ति के व्यक्तिगत और सामाजिक प्रश्न दोनों का अलग विचार किया गया है। कुछ व्यक्तिगत प्रश्न आगे चलकर सामाजिक रूप के प्रश्न

का ही रूप धारण करते हैं, ऐसा दिखाई देता है। रिश्वतखोरी या अनैतिक संबंध यह व्यक्तिगत स्तर के प्रश्न आगे चलकर सामाजिक प्रश्न बन जाते हैं। अत: समाज में जो परिवर्तन होते हैं उससे ही सामाजिक समस्याएँ निर्माण होती हैं। औद्योगिकरणों के कारण आज देश में अनेक व्यवसाय वृद्धिगत होते रहे और ग्रामीण भागों में रहनेवाले लोग शहर में आ गए। इसके कारण निवास की और भोजन की समस्या निर्माण हो गई। समूह में रहनेवाले व्यक्ति के सामाजिक संबंध टूट जाते हैं, तभी उसमें विघटन होता है। जिस समय व्यक्ति, दल, समुदाय इस पर कोई नियंत्रण नहीं रह जाता उस समय भी उसमें विघटन हो जाता है। वैयक्तिक विघटन व्यक्ति से संबंधित होता है। समाज में बनाए हुए नियमों पर व्यक्ति जब चलता नहीं तब अपना आचरण ठीक नहीं करता उस समय समाज की विघटन की शुरूवात होती है।

''आधुनिक काल में विशाल नगर समुदायों की संख्या नित्य बढ़ती जा रही है। अधिक लोगों के छोटी जगह में रहने के कारण उनके पारस्परिक संबंध अनिवार्यत: प्रभावित हो हैं.... नगर में बहुत से लोगों के साथ संबंध स्थापित होता है और उनके साथ व्यवहार भी करना पड़ता है, परंतु संपर्क में आनेवाले बहुत से लोग अपरिचित हैं उसमें घनिष्ठता और आत्मीयता नहीं रहती, उलटे तटस्थता और उदासीनता (Indifference) दृष्टिगोचर होती है। वे 'शिष्टाचार का पालन तो करते हैं परंतु वह दिखावटी या यांत्रिक होता है।''[13]

मानव-मानव के संबंध के कारण, जाति धर्म वंश के आधार पर संघर्ष, इन अवस्थाओं के अंधानुकरण के कारण संघर्ष, यौन संबंध और सामाजिक नैतिकता आदि के कारण सामाजिक समस्याएँ निर्माण होती हैं। मानसिक विकृति के कारण सामाजिक परिस्थिति के कारण जो मन पर तनाव निर्माण होते हैं उनके कारण भी ये समस्याएँ निर्माण होती हैं। आर्थिक अभाव, यौन संबंध, असंतुष्टता, रूढ़ि परंपरा आदि के कारण पारिवारिक समस्याएँ निर्माण होती हैं।

समाज में व्यक्तियों की मूलभूत आवश्यकताएँ बढ़ती हैं और सामाजिक तथा सांस्कृतिक संस्थाएँ उसे पूर्ण करने में असमर्थ या अयशस्वी हो जाती तब जो स्थिति पैदा होती है, उसे ही सामाजिक समस्या कहा जाता है। समाज में आए हुए परिवर्तन और उसकी प्रक्रिया से निर्माण हुए सामाजिक विघटन के परिणामों के कारण ही विविध सामाजिक समस्याएँ होती हैं।

भारतीय समाज जीवन का विचार करते समय हमें यह दिखाई देता है कि औद्योगीकरण, नागरीकरण आदि की निर्मिति होकर इसका परिणाम भारतीय समाज जीवन विघटित होने में हो गया है। परिणाम स्वरूप व्यक्ति में व्यक्तिगत वैफल्य बढ़ रहा है। व्यक्ति अपने व्यक्तिगत जीवन में स्वनिर्मित कुछ विचार धारा निर्माण कर रहा है। उसके आदर्श में कुछ नव निर्मित विचार आ रहा है। इन सभी बातों का परिणाम सामाजिक समस्याओं की निर्मिति में हो गया है। ''समाज में औद्योगीकरण के फलस्वरूप ग्राम मिटते जा रहे हैं और शहर बसते और बढ़ते जा रहे हैं। जीविकोपार्जन के लिए संयुक्त परिवार से पृथक हो विभक्त छोटे परिवार अस्तित्त्व में आने लगे हैं। ...प्रत्येक को दूसरों से श्रेष्ट समझती है - इससे जातीय संघर्ष बढ़ रहे हैं। 'अर्थ' को अधिक महत्त्व प्राप्त होने से पूँजीवादी लोगों में शोषण की प्रवृत्ति बढ़ रही है, जिससे श्रमिकों का विरोध अटल हो गया है।''[14]

सामाजिक जीवन में आचार विचार में जब विचलन या परिवर्तन हो जाता है, तब उसका परिणाम व्यक्ति तथा समूह को नीति भ्रष्ट हो जाने के भय से ग्रस्त लेता है और वही समस्या निर्माण होतीं है।

''समाज रचना - वर्णाश्रम पर आधारित - वर्णभेद, वर्गभेद आदि के कारण संघर्ष और उपाय, व्यक्ति का सामाजीकरण, सामाजिक परिवर्तन, सामाजिक नियंत्रण और सामाजिक नियोजन से संबंधित प्रश्न - नारी सुधार, स्त्री स्वातंत्र्य आदि के कारण उद्‌भूत समस्याएँ रीति-रिवाज, रूढ़ियाँ, परंपराएँ और उनका परिवर्तन आदि समस्याएँ सामाजिक समस्याओं के अंतर्गत आते हैं।''[15]

3.6.2.4 आर्थिक समस्या -

अर्थ शास्त्रज्ञों ने आर्थिक दृष्टिकोण से समाज का विभाजन तीन वर्गों में किया है - निम्न वर्ग, मध्य वर्ग और उच्च वर्ग। परंतु आर्थिक दृष्टि से इन तीनों वर्गों के लोगों के जीवन का स्तर एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न रहता है। निम्न वर्ग के लोगों का जीवन अत्यंत दयनीय रहता है। न उन्हें पेट भर खाना मिलता है, न शरीर ढँकने को पर्याप्त वस्त्र और धूप वर्षा से बचने लायक कोई घर। नंगे-भूखे रहकर वे किसी टूटी-फूटी झोपड़ी में या वृक्ष की छाया में अपना जीवन व्यतीत

करते हैं। मानव शरीर धारण करने से मात्र उन्हें मानव की संज्ञा प्राप्त होती है, अन्यतः उनका जीवन पशु-पक्षियों से भी गया बिता होता है। किसान मजदूर तथा शारीरिक श्रम करनेवाले अन्य लोग इस वर्ग के अंतर्गत आते हैं।

मध्य वर्ग की निम्न वर्ग की अपेक्षा अच्छी होने पर भी पूर्णतया समाधानकारक नहीं मानी जा सकती। सुशिक्षित बेकारों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। परिवार में कमानेवाला एक और खानेवाले अनेक होने से मध्यवर्गीय लोग अभावों से पीड़ित रहते हैं। सुशिक्षित और सुसंस्कृत होने से उनकी अपनी आशा आकांक्षाएँ रहती हैं। अपने अरमान सपने और जीवन मूल्य रहते हैं। परंतु आर्थिक सुविधाएँ न होने के कारण इनकी आशाएँ पूरी नहीं हो सकती। अतः इन लोगों में घुटन, संत्रास, मानसिक विकृतियाँ का प्राबल्य अधिक होता है।

''आर्थिक विकास के हेतु पंचवार्षिक योजनाओं के अंतर्गत सामुदायिक विकास कृषि सुधार भारी उद्योग, कुटीर उद्योग आदि अनेक विकास योजनाएँ सरकारी स्तर पर चल रही हैं, लेकिन आर्थिक विषमता कम होने के स्थान पर दिन-ब-दिन बढ़ रही है। महँगाई, बेरोजगारी, निर्धनता जैसे आर्थिक दुर्भाग्य से कैसे मुक्ति पावें, साधारण लोगों को समझ के परे की बात हो गई है।''[16]

उच्च वर्गीय लोगों के लिए धन का अभाव नहीं रहता। रहने के लिए बड़ी-बड़ी हवेलियाँ, पहनने के लिए मुलायम रेशमी वस्त्र और खाने के लिए मेवा-मिठाई पर्याप्त परिणाम में उपलब्ध होती हैं। मोटर गाड़ी, नौकर चाकर आदि की चमक अलग रहती है। इस वर्ग में राजा महाराजा या उनके समकक्ष अधिकारी, साहुकार, जमींदार, बड़े-बड़े ब्यापारी और उद्योगपति जैसे लोगों का समावेश होता है। ये लोग निम्न वर्ग के लोगों के परिश्रम के बल पर लाखों रुपये कमाते हैं और ऐशो आराम की जिंदगी व्यतीत करते रहते हैं। इन लोगों की धारणा होती है कि दुनिया में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो धन में खरीदी नहीं जा सकती हो। धन के कारण घमंड में रहते हैं। निम्न वर्ग के प्रति इनका व्यवहार अत्यंत कठोरता, निर्दयता तथा अवहेलना से परिपूर्ण रहता है। निम्न वर्ग के लोगों का हर तरह से शोषण करने की प्रवृत्ति का प्राबल्य होने के कारण इनका अपना एक अलग शोषक वर्ग निर्माण हो गया है। शोषक वर्ग में शोषितों के प्रति न सहानुभूति होती है न

शोषितों में शोषकों के प्रति आदर या श्रद्धा की भावना रहती है। "आर्थिक ढांचे की विषमताओं झूटी मर्यादाओं, परंपराओं, नैतिक विकृतियों और संस्कारों के अंधानुकरण से हमारा सामाजिक जीवन विशृंखलित हो गया है।"[17]

3.6.2.5 राजनीतिक समस्या -

15 अगस्त, 1947 को अंग्रेजी की गुलामी से भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई लेकिन देश की स्वतंत्रता एक शाप बनकर खड़ी हुई, जिसमें भविष्य में टूटने-बिखरने का संकेत दिया। देश के नागरिकों ने सुंदर सपना देखा लेकिन क्या करें उनका मोहभंग ही हुआ। दुर्भाग्य इस देश के कर्णधार अपने कर्तव्य से दूर होते चले गए। मुठ्ठीभर लोगों ने देश शासन तंत्र पर अपना अधिकार रखकर व्यक्तिगत हित में उसका दुरुपयोग करना शुरू कर दिया। परिणाम स्वरूप चारों तरफ भ्रष्टाचार पनप गया। व्यक्तिगत स्वार्थ ने यहाँ के नेताओं तथा बड़े-बड़े अधिकारिओं को अंधा बना दिया। राजनीतिक जीवन के साथ ही सामाजिक, आर्थिक धार्मिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक जीवन में भी समस्याएँ विसंगतियाँ तेजी से बढ़ती गई।

"आचार की स्वच्छता और उच्चार का पवित्रता मनुष्य के जीवन में ऊँचाइयों की स्थापना करती है। कल के जीवन में आसुरी प्रवृत्ति के जीव विद्यमान थे और आनेवाले कल भी रहेंगे। आचरण की भ्रष्टता मनुष्यता जीवन का कलंक है। राजनीति एक ऐसा क्षेत्र है यहाँ मनुष्य 'आत्मनो मोक्षार्थ जगार्दूधतायच' की उद्घोषणा कर आनंदभाव से जीवन यापन कर सकता है. लेकिन क्षुद्र स्वार्थों के कारण राजनीति में जितना भ्रष्टाचार हुआ है, हो सकता है, होने की संभावनाएँ हैं उतना अन्यत्र दुर्लभ है।"[18]

आजादी मिलने के बाद देश में चारों ओर राजनीति हावी होती गई। जीवन जगत् का प्रत्येक क्षेत्र आज राजनीति से प्रभावित है। शुद्ध और तत्वनिष्ठ राजनीति का आज देश में अभाव है जिसके परिणाम स्वरूप आज पूरा देश स्वार्थ प्रियता के दल-दल में फँसकर दिन-ब-दिन विनाश की ओर बढ़ रहा है। आज देश की राजनीति भ्रष्टाचार का पर्याय बन गई और त्याग और सेवा से उसका कोई सरोकार नहीं रहा। देश में जितने भी राजनीति दल और नेता हैं, वे सभी सुख-सुविधाओं के के उपभोग को ही अपने जीवन का चरम उद्देश्य माने हुए हैं। देश के नेताओं ने

व्यक्ति-हित के सामने समाज हित और देश-हित को तिलांजली दे दी है। राजनीतिक नेताओं में सदाचार, परस्पर सहयोग, सद्भाव, विश्व बंधुत्व जैसी कोई बात नहीं रही बल्कि अनीति, अनाचार, भ्रष्टाचार, दुश्चरित्रता, गुंड़ागर्दी उनके प्रधान अंग बन गए हैं। प्रत्येक व्यक्ति राजनीति की आड़ में अपने स्वार्थों को पूरा करने में लगता है। स्वार्थ पूर्ति एवं यश लिप्सा की भावना से प्रेरित होकर वह राजनीति में प्रवेश करता है। आज नेताओं की परेशानी देश की खातिर है, न जनता के खातिर, परेशानी का कारण सिर्फ उनके स्वार्थ हैं। ''वर्तमान राजनीति में नेता प्रायः अशिक्षित होता है, वह राजनीति के बारे में चर्चा तो करता है लेकिन वह राजनीति से बिलकुल अनभिज्ञ होता है, उसका राजनीतिक दर्शन खोखला होता है।''[19]

आज नेताओं और मंत्रियों को वही व्यक्ति प्रिय होता है जो वक्त पर उनकी स्वार्थ पूर्ति की जरूरत पूरी करता है और ऐसे ही व्यक्ति उनके कृपा के फल को प्राप्त करते हैं। नेताओं ने स्वार्थ के सामने दल हित को छोड़ दूसरे राजनीतिक दल में शामिल होने में भी देर नहीं लगती। ''भारतीय साधारण जनता ने सोचा था कि स्वतंत्रता के पश्चात् उसकी स्थिति में सुधार आएगा, उसकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी। किंतु स्वतंत्रता के पश्चात् आज तक उसकी स्थिति निरंतर बिगड़ती जा रही है। और इस विषमता का प्रमुख कारण राजनीतिज्ञों के राजनीतिगत स्वार्थ है।''[20]

आज राजनीतिक दल और उसके नेता का उद्देश्य किसी भी तरह से सत्ता हासिल करना रह गया है। चाहे उसके लिए कुछ भी करना पड़े। ये नेता सत्ता हासिल करते हैं, जनता के सामने झूठे नारे लगाते हैं। लेकिन सत्ता हस्तगत करने के बाद कुछ नहीं करते सिर्फ वैयक्तिक स्वार्थ देखते हैं। नेताओं ने जनता के सामने 'समाजवाद, गरीबी हटाओ', के नारे लगाए लेकिन उस पर अमल नहीं हुआ। संविधान के निर्देशक सिद्धांत पर चलने का वादा किया लेकिन उसमें भी जनता को धोखा दिया गया।

''राजनीतिक क्षेत्र में दिन-प्रतिदिन भ्रष्टाचार उग्र रूप धारण करता जा रहा था। राजनीतिज्ञ अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए कर्तव्य भूल कर अधिक-से-अधिक धन प्राप्त करने के लिए निम्न से निम्न कार्य करने लगे हैं।''[21]

इस प्रकार भारत देश की राजनीति को भ्रष्ट करनेवाले इन नेताओं के भ्रष्ट चरित्र और क्रिया-कलाप आज एक समस्या बन गया है।

3.6.2.6 धार्मिक समस्या -

भारतीय संविधान में सभी धर्मों को समान अधिकार होता है। भारत एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है। लेकिन देश की धार्मिक स्थिति वर्तमान में सर्वाधिक विस्फोट है और कोई राजनीतिक या सामाजिक शक्ति इस स्थिति को सुधारने में सक्षम नहीं है। वर्तमान भारतीय राजनीति धर्म और सांप्रदायिकता का सहारा लेकर ही खेल रही है। इसलिए धर्म के नाम पर धर्मांधता की प्रवृत्ति समाप्त होने के स्थान पर बढ़ती ही जा रही है। वर्तमान युग में धर्म-धर्म आलौकिक सुख-साध्य का माध्यम नहीं रहा, अपितु वह इसी धरती पर सुख-सुविधाओं को प्राप्त करने का साधन बन गया है। म. गांधी के बाद कोई भी ऐसा नेता नहीं हुआ जो धार्मिक संगठन की दिशा में ठोस कदम उठाए या धार्मिक स्थिति को नियंत्रित करने के कुछ उपाय सुझा सके। आज देश में मंदिर-मस्जिद की समस्या सामने खड़ी है।

''धर्म के प्रति बदलनेवाली श्रद्धा या आस्था,
धर्म और विज्ञान, धर्म और नीति इनमें परस्पर संबंध
धार्मिक विश्वास ढलने के कारण और उसके परिणाम।''[22]

लोकतंत्र, व्यक्तिवाद, सामाजिक और आर्थिक न्याय, समाजवाद, राष्ट्रवाद, साम्यवाद आदि वैचारिक पंथों में धर्म को कोई स्थान नहीं है, फिर भी यहाँ धर्म है, धर्म द्वारा प्रस्तुत जाति व्यवस्था, वर्णभेद और सांप्रदायिकता है। ''आधुनिक वैज्ञानिक युग में जीवन की व्यस्तता के कारण धार्मिक विधियों के लिए पहले जैसी फुरसत नहीं मिल रही है। ग्रामों में धार्मिक विधि और संस्कार बहुत कुछ दिखाई देते हैं। पर शहरों में पूजा, प्रार्थना, जप-तप आदि धार्मिक विधियों को कम-से-कम समय में निपट लेने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। यह अंतर भौतिक परिस्थिति के कारण निर्मित है। .....इसी तरह प्राचीन काल से चलती आयी धार्मिक रूढ़ियों, परंपराओं और अंध-विश्वासों की मात्रा भी दिन-प्रति-दिन घटती हुई दिखाई दे रही है। समय के अनुसार धर्म के स्वरूप

को बदलना ही चाहिए, अन्यथा नए-पुराने विचारों और दृष्टिकोणों के अंतर के फलस्वरूप संघर्ष अटल होगा।''[23]

बहुत प्राचीन काल से जन सामान्य पर धर्म का प्रभाव रहा है। सदियों से अज्ञान और अंधविश्वास फैलाने का काम राजसत्ता, अर्थसत्ता और धर्मसत्ता ने मिलकर किया है।

3.6.2.7 लोकसंख्या समस्या -

बढ़ती हुई लोक संख्या के कारण समस्याओं का अंत होना कठिन है, चाहे भूख की समस्या हो या बेकारी की। बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण लोगों को हर समय आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ेगा। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण देश को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसलिए आज लोगों को 'परिवार नियोजन' का महत्त्व समझना चाहिए। लेकिन अपने देश का हर व्यक्ति चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित, बच्चे पर बच्चे पैदा ही करता रहता है। ऐसे कितने शिक्षित लोग हैं जिनके चार पाँच बच्चे होते हैं।

बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण व्यक्ति को आर्थिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है। जिसके कारण परिवार का खर्चा उठाना व्यक्ति को मुश्किल होता है। परिवार के सदस्य न भर-पेट खा पाते हैं न अपने इच्छा से कपड़े पहन पाते हैं। न उन्हें स्वास्थ्य मिलता है, न उनके बच्चों को अच्छी शिक्षा मिलती है, न संस्कार न भविष्य होता है। बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण लोगों को रहने के लिए जगह नहीं मिल रही है। एक ओर पाँच-छः लोगों का परिवार गंदे मुहल्ले में बदबुदार कमरे में अपना जीवन बीताता है तो दूसरी ओर आलीशान महलों में दो नंबर का धंधा करनेवाले लोक ऐश-ओ-आराम की जिंदगी काट रहे हैं। सामान्य आदमी कभी कार से नहीं घुमेगा और न ही उसके जीवन में रोशनी फैलनेवाली है। बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण आम-आदमी को आनेवाला दिन जानेवाले दिन के समान होता है, जिसके बारे में वह कभी शिकायत नहीं करता, एक तृप्त आदमी की तरह वह अपना जीवन यापन करता है।

बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण व्यक्ति को हर वक्त समस्याओं का सामना करना पड़ेगा, उसके जीवन में सुधार संभव नहीं है। जनसंख्या की वृद्धि ने जीवन-जीने के साधनों की कमी और बेरोजगारी की समस्या को और भी व्यापक बना दिया है।

3.6.2.8 सांस्कृतिक समस्या -

संस्कृति वह तत्त्व है, जो देश के नागरिकों के जीवन का संस्कार करती है। भाषा, वर्ण, रहन-सहन, आचार-विचार आदि की भिन्नता होते हुए भी उन्हें एकता के सूत्र में बाँधे रखती है। भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीनतम् संस्कृति है। ''मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग कर विचार और कर्म के क्षेत्र में जो सृजन करता है उसी को संस्कृति कहते हैं।''[24]

अनेकता में एकता उसकी अपनी एक खासियत है, जो उसे आज तक जीवित रखे हुए है। विभिन्न मतों, सिद्धांतों, भाषा, विचार धाराओं, प्रवृत्तियों, रहन-सहन, खान-पान और विभिन्न भौगोलिक स्थितियों के रहते हुए भी वह लोगों के बीच परस्पर समन्वय स्थापित कर राष्ट्रीय एकता और अखंड़ता की भावना को बलवती प्रेरणा देती रही है। आधुनिक काल में भी अनेक महापुरुषों, विचारकों और साहित्यकारों ने इसी समन्वयवाद की प्रतिष्ठा करने का प्रयास किया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भारतवासियों के हृदय में अपनी संस्कृति, अपने रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन आदि के प्रति जो आस्था थी, स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात वह तेजी से टूटती चली गई। देश की अवसरवादी राजनीति और पाश्चात्य शिक्षा, सभ्यता के फलस्वरूप जन्मी आधुनिकता ने सांस्कृति और नैतिक दृष्टि से हमारा पतन शुरू कर दिया। समाज के आचार-विचार, खान-पान, वेशभूषा सब कुछ बदल गए। ''बीसवीं शताब्दी की महत्त्वपूर्ण घटना विज्ञान का विकास है। वैज्ञानिक आविष्कारों से मानव के रहन-सहन, विचारों एवं भावनों में परिवर्तन आया। आधुनिक संस्कृति विज्ञान की संस्कृति है।''[25]

यांत्रिकता के कारण आर्थिक परिवेश में परिवर्तन आया है। स्त्री आज आर्थिक रूप से स्वतंत्र होना चाहती है। क्योंकि भौतिक सुखों की अदम्य लालसा तथा समाज में विशिष्ट पद-प्राप्ति की आकांक्षा यांत्रिक संस्कृति का ही एक पहलू है।

मनुष्य का चरित्र जो हमारे जीवन की अमूल्य धरोहर समझा जाता था वह पतित होता चला गया। आज जीवन जीने का तरीका पूरी तरह बदल गया है। आज की युवा पीढ़ी को पूराने जीवन-मूल्यों से एक तरह की नफरत-सी है। ''पश्चिमी संस्कृति बुरी तरह हमें प्रभावित कर

रही है। नेहरू जैसे स्वतंत्र चेता भी इस घेरे से मुक्त नहीं थे। एक तरफ यह कहा जा रहा है कि 'संस्कृति का व्यापक जनाधार' जरूरी है, मगर दूसरी तरफ आधुनिकीकरण के सवाल पर पश्चिमीकरण की दुहाई दी जाती है.... यद्यपि समाज संस्कृति के द्‌वंद्‌व ने एहसास अवश्य कराया था कि एक परिवर्तन की जरूरत है। यह परिवर्तन पहले पश्चिमीवाद के सहारे आया जिससे भारत के नैरंतर्य पर चोट पड़ी और संस्कृति क्षेत्र में शहर-ग्राम फासला और भी अधिक गहराने लगा।"[26]

नई और पुरानी पीढ़ी का संघर्ष आज के सांस्कृतिक जीवन की सबसे बड़ी विड़ंबना है। देश की युवा पीढ़ी पश्चिमी अंधानुकरण से पनपनेवाली आधुनिक सभ्यता की गुलाम बनती चली गई। आधुनिकता और फॅशन परस्ती के नाम पर देशवासियों का नैतिक और चारित्रिक पतन होता चला गया। केवल अंग-प्रदर्शन, मांस-मदिरा का सेवन, क्लबों और पाश्चात्य रंग में रंगे हुए सांस्कृतिक समारोहों में अनेक अपनी गर्लफ्रेंडस के साथ-रंग-रेलियाँ मनाने की प्रवृत्ति समाज में दिन-ब-दिन बढ़ती गई। स्त्री का आभूषण समझे जानेवाला लज्जा-भाव पूरी तरह लुप्त हो गया है। आज हर तरूणी अपने पर्स में मेक-अप की सामग्री रखकर दिन में न जाने कितनी ही बार मेक-अप करती रहती है।

इस प्रकार आज नगर और महानगर पूरी तरह पाश्चात्य रंग में रंगे हुए हैं। आज की संस्कृति विज्ञान की संस्कृति है।

निष्कर्ष -

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि 'समस्या' शब्द को कठिन या 'विकट प्रसंग' इस अर्थ में लिया है। 'समस्या' ने मानव समाज को जकड़ रखा है - त्रस्त किया है। समस्या भौतिक और आध्यात्मिक दो प्रकार की होती हैं। वर्तमान युग समस्या का युग है। समस्या साहित्य, कुंठा, अवसाद और निराशा के जीवन में नई चेतना, नया आत्मबल तथा नया सहास भर देता है। साहित्य में सम-सामायिक तथा देशकाल एवं साहित्यिक परंपराओं के अनुकूल समस्याओं का चित्रण होना चाहिए यह केवल युग की अनिवार्यता नहीं अपितु मानव जीवन की आवश्यकता है। वर्तमान युग में समस्या साहित्य की आवश्यकता का महत्त्व बढ़ रहा है। उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी तथा कविता आदि साहित्य की कुछ ऐसी विधाएँ हैं जिनके द्‌वारा समस्याओं से समाज को

अवगत किया जा सकता है। आज के युग में समस्या साहित्य का निर्माण होना अंततः अनिवार्य हो गया है जो जीवन की ओर राष्ट्र से संबंधित आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृति, धार्मिक सभी समस्याओं को सुलझे हुए रूप में लेखक प्रस्तुत कर रहे हैं।

आधुनिक युग में नारी बहुत सीमा तक स्वतंत्र हुई हैं किंतु आज भी नारी अनेक समस्याओं से पीड़ित है। बाल विवाह, अनमेल विवाह, बहुविवाह, विधवा विवाह और पुनर्विवाह की समस्याएँ नारी जीवन में बनी हुई हैं। मानव-मानव से संबंध, जाति, धर्म, वंश के आधार पर संघर्ष, अवस्थाओं के अंधानुकरण के कारण संघर्ष, यौन-संबंध और सामाजिक नैतिकता आदि के कारण सामाजिक समस्याएँ निर्माण होती हैं। आर्थिक अभाव, यौन संबंध, असंतुष्टता, रूढ़ि परंपरा आदि के कारण पारिवारिक समस्याएँ निर्माण होती हैं। परिवार में कमानेवाला एक और खानेवाले अनेक होने से मध्यवर्गीय लोग अभावों से पीड़ित रहते हैं। आज के राजनीति दल और नेता का उद्‌देश्य किसी भी तरह से सत्ता हासिल करना रह गया है। आज राजनीति क अर्थ भ्रष्टाचार का पर्याय माना जाता है। राजनीति को भ्रष्ट करनेवाले नेताओं के भ्रष्ट चरित्र आज एक समस्या बन गई है। बढ़ती लोकसंख्या के कारण सुशिक्षित बेकारों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। आज की भारतीय संस्कृति को विज्ञान की संस्कृति से पहचाना जाता है। इस प्रकार आज का युग समस्याओं का युग है।

संदर्भ सूची

1. रामचंद्र शर्मा, संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर, पृ. 956
2. सत्य प्रकाश डी. एस्. सी. मानक अंग्रेजी हिंदी कोश, पृ. 1071
3. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी मानक कोश, पृ. 283
4. डॉ. विमल भास्कर, हिंदी में समस्या साहित्य, पृ. 9
5. वही, पृ. 10
6. डा. एम्. के. गाडगील, हिंदी एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति पृ. 247
7. वही, 274
8. डॉ. रामेश्वर नारायण 'रमेश', साहित्य में नारी विविध संदर्भ, पृ. 14
9. डॉ. शैल रस्तोगी, हिंदी उपन्यासों में नारी, पृ. 53
10. डॉ. अर्जून धरत, नागार्जून के नारी पात्र, पृ. 68
11. डॉ. शैल रस्तोगी, हिंदी उपन्यासों में नारी, पृ. 303
12. डॉ. उमा शुक्ल, मैथिलिशरण गुप्त के काव्य में नारी की विविध भूमियाँ, पृ. 102
13. डा. एम्. के. गाडगील, हिंदी एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति पृ. 247
14. वही, पृ. 46
15. वही, पृ. 47
16. डॉ. पीतांबर सरोदे, आधुनिक हिंदी उपन्यासों में राजनैतिक एवं आर्थिक चेतना, पृ. 262
17. प्रभा वर्मा, हिंदी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप, पृ. 288
18. डॉ. पीतांबर सरोदे, आधुनिक हिंदी उपन्यासों में राजनैतिक एवं आर्थिक चेतना, पृ. 53
19. प्रभा वर्मा, हिंदी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप, पृ. 13
20. वही, पृ. 10
21. वही, पृ. 23
22. डा. एम्. के. गाडगील, हिंदी एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृ. 48
23. वही, पृ. 171
24. वही, पृ. 171
25. प्रभा वर्मा, हिंदी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप, पृ. 132
26. गिरधर राठी, द्विमासिक पत्रिका, समकालीन भारतीय साहित्य, पृ. 132